षष्ट अध्याय

"साथ संगत में विस्तारक्षम रचनाओं का स्थान"

प्रस्तावना :

शास्त्रीय संगीत में प्राचीन काल से ही दुन्दुभि, त्रिपुष्कर, मध्यकाल में मृदंग अथवा पखावज और आज वर्तमान में तबला वाद्य को सर्वाधिक महत्व एवं स्थान प्राप्त हुआ है। अवनद्ध वाद्य के वादक कलाकारों ने प्रत्येक युग में संगीत को समृद्धशाली, गौरवशाली तथा आनन्दमयी बनाने के लिए अपने कर्तव्य और भूमिका का बखूबी निर्वाहन किया हुआ है। आज तबला यह साज भारतीय संगीत में एक प्रमुख अवनद्ध वाद्य के रूप में पहचाना जाता है और इसी कारण तबला भारतीय संगीत में किसी अन्य अवनद्ध वाद्य की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। जैसे–जैसे तबला वाद्य का विकास होता गया वैसे ही संगीत में इसकी आवश्यकता और अधिक बढती गयी और यह वाद्य काफी लोकप्रिय हो गया। तबले से निकलने वाला तार ध्वनि और बायाँ से निकलने वाला खड्ज ध्वनि इसी कारण यह साज ख्याल गायन, उपशास्त्रीय संगीत, तंतुवाद्य, नृत्य आदि प्रकारों के साथ साथसंगत करने में अपनी जिम्मेदारी बखुबी निभाता आ रहा है। वर्तमान में तबला इस वाद्य ने केवल साथसंगत का साज न रहते हुए स्वंतत्र रूप से प्रस्तुत होनेवाले एक प्रमुख लय–तालवाद्य के रूप में इस वाद्य ने गौरव प्राप्त किया हुआ है। तबला वाद्य के इस विकास में, तबले के विद्वानों ने तथा मुर्धन्य कलाकारोंने दिया हुआ योगदान कभी भी भुलाया नहीं जा सकता।

तबला संगतकार को अपनी भुमिका निभाते हुए केवल अपना वादन प्रभावी करने के साथही संपूर्ण संगीत मैहफिल सफल करने की प्रमुख जिम्मेदारी तबला संगतकार की भी होती हैं और यह जिम्मेदारी तबला संगतकार बखुबी निभा रहा है। इस वजह से साथसंगत के तिनो विधाओं गायन, वादन व नृत्य के लिए तबला साज आज एक प्रमुख तथा प्रभावी माध्यम बन चुका हैं। प्रस्तुत अध्याय में गायन, वाद्यसंगीत तथा कथक नृत्य के बारे में जानकारी दी गई है साथ ही, तबला संगतकार की साथसंगत के दरम्यान किस प्रकार की भूमिका रहती है तथा

साथसंगत करते समय विस्तारक्षम रचनाओं का स्वरूप किस प्रकार रहता है आदि तथ्यों पर दृष्टि डालने का प्रयास शोधार्थी ने इस अध्याय में किया हुआ हैं।

6.1 साथसंगत के उद्देश्य से तबला वाद्य का निर्माण :

उत्तर भारत में प्रचलित धृपद–धमार गायन शैली के साथ पखावज, यह साज, साथसंगत बखुबी निभा रहा था। लेकिन धृपद, धमार गायन प्रकार के बाद जब 'ख्याल गायकी' का उद्‌गम हुआ और वह अधिक लोकप्रिय हो गयी, तब साथ संगत के लिए पखावज, के अलावा किसी दुसरे अवनद्ध वाद्य की आवश्यकता महसुस हुई जो ख्याल गायन को अपेक्षित साथसंगत कर सके और यह कमी तबला इस वाद्य ने पूरी की। सभी अवनद्ध वाद्यों में कुछ प्रमाणतक सुर का निर्माण होता ही है, लेकिन तबला एकमात्र ऐसा साज, है जो तानपुरे के सुर के साथ काफी एकरूप होता है। धृपद की तुलना में धीरगंभीर, लेकिन ख्याल गायन को आवश्यक पखावज, का लंबा और चौडा स्वर रसहीन लगने लगा। धृपद, धमार के समय सितार वादन का भी प्रचलन बढ गया था। तबला यह वाद्य पहले कमर से लटकाकर बजाया जाता था, किन्तु ख्याल गायन और सितार के साथ संगत करने में आसानी हो इसलिए तबला वाद्य को नीचे रखकर बैठके बजाया जाने लगा। ख्याल गायन के साथ संगत में पखावज, के गंभीरयुक्त तथा खुले जोरदार बोल सौंदर्यता लाने में असफल रहे और इस वजह से संगत के लिए पखावज, का स्थान तबला वाद्य ने ले लीया। कथक नृत्य को राजाश्रय मिला था तथा कथक नृत्य का भी विकास हो चुका था। और कथक नृत्य के साथ संगत मे पखावज, का उपयोग किया जाता था। किन्तु कथक नृत्य का 'तत्कार' प्रकार जो द्रुत लय में प्रस्तुत किया जाता है वह पखावज, जैसे वाद्य पर बजाना बहुत ही कठिन महसूस होने लगा, इस वजह से कथक नृत्य के साथ भी तबला वाद्य का उपयोग संगत के रूप में किया जाने लगा।

शुरूवात के समय तबला साज गायन, वादन और नृत्य के साथ संगत करने के उद्देश्य से ही निर्माण हुआ। किन्तु बाद में तबले के कई विद्वान कलाकारों ने स्वतंत्र तबला वादन की नींव डाली। स्वतंत्र वादन करने के लिए अलग से वादन साहित्य का निर्माण किया गया और स्वतंत्र तबला वादन के लिए विभिन्न घरानों का

निर्माण हुआ। संगीत की सभी धाराओं में साथ संगत के लिए तबला वाद्य का प्रयोग अधिक किया गया, इसी कारण आज भी एकल तबला वादन के साथ ही साथसंगत करने के लिए तबला वाद्य काफी प्रचलित माना जाता है और संगत के लिए अत्यंत लोकप्रिय साज के रूप में परिचित हैं। 'सगंत का साज' के नाम से तबला वाद्य ने इतना नाम कमाया है की, ख्याल गायन, तंतूवाद्य, नृत्य (कथक), उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, लोकसंगीत जैसे लगभग सभी संगीत प्रकारों के साथसंगत के लिए तबला एक प्रमुख वाद्य के रूप में जाना जाता हैं। साथसंगत और एकल तबला वादन दोनों में अंतर है। संगत की तकनिक अलग होती हैं। इस कारण एकल तबला वादन को तैयारी के साथ प्रस्तुत करनेवाला तबला वादक उतनी ही प्रभावी संगत कर पायेंगा यह कहाँ नही जा सकता। एकल तबला वादन के साथ ही 'संगत' की शिक्षा मिलना अत्यंत आवश्यक होता हैं। हर किसी संगीत में ताल विषयक आवश्यकताएँ भिन्न–भिन्न होती है। सभी प्रकारों में अलग अलग लय की आवश्यकता होती है। उदा. केहरवा ताल के ठेके का प्रयोग भावगीत, भक्तिसंगीत के साथ अलग होगा और नाटयसंगीत के साथ अलग। ताल तीनताल का ठेका ख्याल गायन के साथ अलग बजेगा और तंतूवाद्य के साथ अलग बजेगा, इसलिए साथ और संगत दोनों में अंतर होता है। गायन के साथ जो कि जाती है, वह 'साथ' होती है और वाद्यसंगीत तथा कथक नृत्य के साथ कि जाती है, उसे 'संगत' कहते है।

6.1.1 साथ और संगत :

साथसंगत में दों प्रकार होते है पहला है 'साथ और दुसरा है 'संगत'। 'साथ' का मतलब हाथ में हाथ देकर विश्वास दिलाना और 'संगत' का मतलब हाथ देकर बराबर चलना, ऐसा कहाँ जा सकता हैं। तबला संगतकारद्वारा मुख्य कलाकार के प्रति दिखाया हुआ विश्वास साथ और विश्वास की प्रामाणिकता से मतलब की गई पुर्तता याने संगत। संगीत कला में विभिन्न प्रकारों के लिए तबले की साथसंगत करना मतलब उन प्रकारों की तालवाद्य से रहनेवाली हर अपेक्षा की पूर्ति करना ऐसा कहना उचित होगा। तबले की साथसंगत मुख्य कलाप्रकार तथा विषय के अनुरूप एवं पोषक होना जरूरी होता है"। संगत शब्द का मतलब प्रमुख कलाकार के

अनुसार जाना या चलना, किसी गायक, वादक या नर्तक के चलन, लय, ताल, एवं संगीत के अनुरूप वादन करना। साथसंगत इस शब्द के अर्थ के बारे में पं. अमोद दंडगे अपनी मराठी अनुवादित 'सर्वांगीण तबला' इस पुस्तक में लिखते है कि, "साथ करणे, संगत करणे म्हणजेच व्यावहारिक अर्थाने बघितल्यास सोबत देणे होय. कितीही सुखदुःखात साथ देणे, आधार देणे असा त्याचा अर्थ आहे. संगीतातही साथीदाराकडून त्याचा वर्तनाची अपेक्षा आहे. स्वतःचा अहं बाजूला ठेवून, आपल्या विद्धतेचे नाहक ओझे मुख्य कलाकारावर न ठेवता निर्गवी, माझ्या अस्तित्वाचा मुख्य कलाकाराला केवळ फायदाच झाला पाहिजे अशी मनोवृत्ती असणारा तबला वादकच चांगली साथसंगत करू शकतो."[1] "डॉ. भीमसेन सरल अपनी 'तबला संगत एवं कलाकार इस ग्रंथ में संगत के बारे में लिखते है कि, "प्रमुख राहगीर को साथी राहगीर द्वारा संगत प्रदान करने का लक्ष्य या उद्देश्य होता है – मुख्य राहगीर के साथ चलते हुए मार्ग में आनेवाली विभिन्न मुसीबतों से उसे बचाना, डटकर उनका सामना करना व कंधे से कंधा मिलाते हुए प्रमुख राहगीर के साथ चलना और उसको हँसी–खुशी व आनन्द के साथ, बिना किसी शंका या विशेष परेशानियों के उसके निश्चित किये गये लक्ष्य, तक पहुँचने में अपनी कुशल भुमिका का निर्वाहन करना" ।[2]"जब एक कलाकार की कला प्रस्तुति के दौरान दुसरे कुछ कलाकार उसे रचनात्मक सांगितिक सहयोग देते है, पूरी प्रस्तुति के दौरान कदम कदम पर उसका कलात्मक साथ निभाते है, तो उसे संगति कि भाषा में संगत करना कहते है" ।[3]

प्राचीन काल से वर्तमान काल तक अनेक वाद्यों का प्रयोग संगत करने के लिए होता आ रहा है। प्राचीन काल से मध्यकाल तक गायन, वाद्यसंगीत तथा कथक नृत्य के साथ संगत के लिए पखावज का प्रयोग किया जाता था। धीरे–धीरे प्राचीन गीत एवं नृत्य का प्रचलन कम होता गया और ख्याल, ठुमरी, टप्पा, भजन, गजल जैसी अन्य गीतों के प्रकार विशेष प्रचार में आने लगे। इनके साथ मृदंग जैसे गंभीर प्रकृति के वाद्य का प्रचार कम होता गया और तबला वाद्य का प्रयोग संगत के लिए किया गया। तबले पर साथ संगत के लिए मृदंग के खुले बोल और बंद बोलों को भी आसानी से बजाना संभव था। इस कारण तबला साज संगत के लिए अधिक उपयोगी समझा जाने लगा। आगे शास्त्रीय गायन, वाद्यसंगीत तथा कथक

नृत्य के बारे में जानकारी तथा इन तीनों विधाओं के साथ तबला संगतकार की भूमिका को दर्शाने शोधार्थी ने एक प्रयास किया है।

6.2. शास्त्रीय गायन के साथ तबला संगत :

शास्त्रीय गायन के क्षेत्र में प्राचीन काल से ही धृपद धमार एक प्रचलित गायन शैली मानी जाती है। इस गायन को विशेषता चौताल या सूलताल में गाने का प्रचलन है। इस गायन प्रकार के साथ पखावज की संगत होती है। लेकिन तबला इस वाद्य पर पखावज जैसे खुले एवं जोरदार बोलों को निर्माण करने का सामर्थ्य होने के कारण आज धृपद–धमार के साथ तबला इस साज का भी प्रयोग किया जाता है। तबला संगतकार इसप्रकार के गायन के साथ पखावज की भाँति खुले बोलों का ठेका भरते हुए संगत करता है। तबले का मुख्य प्रयोजन शुरूवाती के समय ख्याल गायन के साथ संगत करने के उद्देश्य से ही हुआ था। ख्याल गायन में 'बडा ख्याल' और 'छोटा ख्याल' ये दो प्रकार होते है। विलंबित लय में गाये जानेवाले प्रकार को 'विलंबित ख्याल' या 'बडा ख्याल' कहते है, जिसमें ताल के ठेके की लय विलंबित होती है और दो मात्राओं के बीच अधिक जादा अंतर होता है। एक मात्रा के चार भाग 'विलंबित ख्याल' के लय में दिखाई देते है। कभी कभी एक मात्रा के दो भाग करके भी विलंबित ख्याल गाया जाता है। जिस ख्याल को मध्यलय या द्रुत लय में गाया जाता है उसे 'द्रुत ख्याल' या 'छोटा ख्याल' कहते है। इसमें ताल के ठेके की दो मात्राओं के बीच का अंतर बहुत कम होता है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत उपशास्त्रीय संगीत का भी समावेश होता है। इस प्रकार के गायन शैली में कुछ शास्त्रीय नियमों में शिथीलता दी जाती है। उपशास्त्रीय संगीत में ठुमरी, दादरा, टप्पा, चैती, कजरी, होरी आदि गायन शैलीयों का समावेश होता है। यह गायन प्रकार श्रृंगार रसप्रधान होने के कारण इनके साथ चंचल प्रकृती के तालों का प्रयोग किया जाता है। उपशास्त्रीय संगीत में सुगम संगीत गायन प्रकार यह एक भावप्रधान गायकी मानी जाती है। इस गायन में शब्द और भाव प्रधान होते है। इसमें गीत, गजल, भजन, किर्तन आदि का समावेश होता है। इनके साथ संगत के लिए प्रायः ढोलक और तबला वाद्य का प्रयोग किया जाता है। चित्रपट संगीत जैसे श्रृंगार रस प्रधान गायकी के साथ कम मात्राओं की

चंचल प्रकृती के तालों का प्रयोग किया जाता है। जैसे दादरा, केहरवा, दीपचंदी, रूपक आदि।

अतः शोधार्थी ने कई गायन कलाकारों के साथ स्वयं संगत करने पर तथा अनेक विद्वान तबला वादकों की साथ संगत सुनने और देखने के पश्चात यह महसुस किया कि, गायन के साथ संगत में तबला संगतकार द्वारा विस्तारक्षम रचनाओं में केवल लग्गी या लडी का ही प्रयोग किया जाता हैं। अपितु, लग्गी, लडी इनका प्रयोग ठुमरी, सुगम संगीत जैसे गायन प्रकार के साथ ही होता है। तबला संगतकार को गायक द्वारा जब बजाने के लिए मोका दिया जाता है तब उसे बहुत कम आवर्तन बजाने के लिए प्राप्त होते है, जिसकी वजह से वादक इन रचनाओं का विस्तार नही कर पाता है और इनका विस्तार दो–तीन पलटों में ही लुप्त हो जाता है। इनका विस्तार केवल गायन के अनुरूप और आवश्यकता अनुसार ठेके द्वारा साथ संगत करना इतना ही होता हैं। आगे कुछ प्रचलित शास्त्रीय एवं उपशास्त्रीय गायन प्रकारों के साथ ही वाद्यसंगीत और कथक नृत्य के बारे में जानकारी एवं इन विधाओं के साथ तबला संगतकार की साथ संगत की दृष्टि से भूमिका के बारे में शोधार्थी ने प्रकाश डालने का प्रयास किया है।

6.2.1 ध्रुपद :

धृपद गायन सबसे प्रतिष्ठित, प्राचीन और शास्त्रीय संगीत शैलियों में से एक गायन प्रकार है। कहाँ जाता है कि, ध्रुपद गायन का अविष्कार सबसे पहले 15 वी सदीं में ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर द्वारा किया गया। उन्होंने स्वयं कुछ ध्रुपदों की रचना की थी। वर्तमान में, धृपद गायन प्रकार संगीत मैफीलों में काफी दुर्लभ हो चुका है। धृपद गायन अधिकांश ध्रुपद हिंदी, ब्रज या उर्दु में पाए जाते हैं। ध्रुपद के उत्पत्ति का पता नहीं लगाया जा सकता है। लेकिन, ध्रुपद पिछली पाँच, साढे पाँच सदीयोंसे उत्तर में काफी लोकप्रिय गायन प्रकार माना जाता हैं। अकबर के दरबार में प्रसिद्ध गायक सभी ध्रुपद गायक थे। उनमें सबसे बढकर, तानसेन एक अद्धितीय गायकरत्न थे। तानसेन वृंदावन के बाबा हरिदास स्वामी डागुर के सर्वश्रेष्ठ शिष्य माने जाते थे। स्वामीजी की ध्रुपद रचनाएँ गोपालनायक, बैजू, मियाँ तानसेन और चिंतामणि मिश्र के साथ आज भी सुनी जा सकती हैं।

ध्रुपद यह हिंदुस्थान का एक जोरदार, गंभीर गायन प्रकार माना जाता है। ध्रुपद गायन खयाल गायन की तुलना में अधिक उन्नत और व्यापक है। ध्रुपद में अंतरा, संचारी और अभोग ये चार भाग होते हैं। कुछ ध्रुपद में केवल दो भाग थे। प्रत्येक भाग में 3–3, 4–4 चरण होते है। धुपद में तानों का प्रयोग नही होता, किन्तु उसमें दुगुन, चौगुन, बोलतान आदि का प्रयोग किया जाता है। ध्रुपद गायन में लयकारीका काम अधिक किया जाता है। गायक लयबाँट अथवा दुगुन, तिगुन, छहगुन, जैसी सीधी और पौनगुन, आड, कुआड, सातगुन आदि जटिल लयकारीयों का प्रयोग करता हैं। ध्रुपद अधिकतर चौताल, सूलफाक, झंपा, तीव्रा, ब्रम्हताल, रूद्रताल आदि तालों में गाए जाते हैं। इसके साथ संगत के लिए पखावज का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान में ध्रुपद गायन बहुत कम गाया जाता है। कईबार ध्रुपद गायन के साथ तबला संगत भी की जाती है, लेकिन इस गायन के साथ संगत करते समय तबला वादक विस्तारक्षम रचनाओं का प्रयोग नहीं करता। प्राचीन कालसे ही ध्रुपद गायन बहुत लोकप्रिय गायन प्रकार था और आज भी शुद्ध और पूजनीय माना जाता हैं। ख्याल गायन के उद्‌गम के पश्चात ख्याल गायन को अधिक प्रतिष्ठा मिलने के कारण ध्रुपद गायन का प्रचलन धीरे–धीरे कम होता गया हैं।

6.2.2 खयाल :

खयाल मुल फारसी शब्द है।'खयाल' का अर्थ है विचार या कल्पना। ऐसा कहाँ जाता है की जौनपुर के सुल्तान हुसेन शर्की ने ख्यालगायन को लोकप्रियता और प्रतिष्ठा दी थी। मुघल सम्राट मुहम्मद शाह (1799–1840) के दरबार में, सदारंग और अदारंग इन दो गुणी गायकों ने कई रचनाएँ बनाई और अपने शिष्यों द्वारा उसका प्रचार और प्रसार किया। आज भी इन दोनों की कई रचनाएँ अनेक संगीत मैफिलो में गायी जाती है। 'खयाल' गायन में रागों के नियमों का पूर्ण रूप से पालन करते हुए, गायक अपनी कल्पना से विभिन्न आलाप तानों के माध्यम से विस्तार करते हुए एकताल, तीनताल, झुमरा, आडाचौताल, तिलवाडा, रूपक, झपताल आदि तालों में इसे प्रस्तुत करता है। इस गायन प्रकार में श्रृंगार रस का प्रयोग अधिक किया जाता है। खयाल गायन में जलदतान, गिटकरी का भी उपयोग किया

जाता है। खयाल गायन में धृपद जैसी गंभीरता और भक्तिरस दिखाई नही देता है। खयाल दो प्रकार के होते है, जो विलंबित लय में प्रस्तुत किया जाता है उसे 'बडा खयाल' और जो द्रुतलय में गाया जाता है, उसे 'छोटा खयाल' कहाँ जाता है। गायक, जब खयाल गायन की शुरूवात करता है तो पहले बडा खयाल की प्रस्तुती करता है। इसके बाद छोटा खयाल प्रस्तुत होता है। बडा ख्याल के साथ संगत करते समय तबला वादक शुद्ध ठेका बजाता है तथा गायन के अनुरूप आखिर के एक या दो मात्रा में छोटे–छोटे मुखडे या किस्म का प्रयोग ठेके में करता है। छोटे ख्याल में ठेके को विभिन्न बोलों से भरकर छोटे छोटे मोहरे, मुखडे एवं तिहाई द्वारा संगति को आकर्षक एवं रंजकतापूर्ण बनाया जाता है। पं. सुरेश तळवलकर अपने मराठी अनुवादीत 'आवर्तन' इस ग्रंथ में ख्याल गायन के साथ संगत के बारे में लिखते है कि, ''ख्यालाच हेच मर्म आहे कि धृपदासारखी तालाची ठोस लय न सांगणारी, रागातील स्वराच्या ठेक्याच्या अवतीभोवती रूंजी घालणारी ही बंदीश आवर्तनाचा नीटनेटका आणि आखिव बांधा मात्रा सिध्द करत राहते आणि ठेक्यातील वर्णाना कधी ओलांडत, तर कधी कवेत घेत ठेक्याच्या स्थिरतेनंच स्थल गायकी संपन्न होत राहाते. अर्थातच शुध्द, लयदार आणि सुरेल ठेका हा अस्थायीच्या प्रतिष्ठापनेसाठी अत्यावश्यक ठरतो. ख्यालाच्या या स्वरूपाचे भान ठेवून तबला वादकाने स्थायीच्या वेळी शुध्द ठेका वाजवावा, स्वतः त्याचा आनंद घ्यावा आणि श्रोत्यांपर्यतही तो पोहचू द्यावा.''[4]

शास्त्रीय गायन में अनेक घराने है। यह घराने प्रमुखरूप से 'स्वरप्रधान', 'लयप्रधान', 'स्वर–लयप्रधान' इन तत्वोंपर आधारित होते है। सभी घराने लय और ताल को प्रदर्शित करते है। स्वर प्रधान गायकी में किराना घराना, लयप्रधान गायकी के लिए आग्रा घराना तथा स्वर–लयप्रधान गायकी के लिए ग्वाल्हेर एवं जयपूर घराना परिचित है। स्वरप्रधान घराने की गायकी आमतौरपर अतिविलंबित एकताल, झुमरा आदि तालों में गायी जाती हैं। लयप्रधान गायकी तिलवाडा, तिनताल और एकताल, झुमरा आदि तालो में गाया जाता है। लेकिन इन तालों की लय अतिविलंबित नही होती। इस वजह से तबला संगतकार को सभी प्रकारकी गायकी के साथ तथा विभिन्न गायक कलाकारों के साथ, विभिन्न प्रकार के ताल के ठेके, विभिन्न प्रकार की लय में बजाने की आदत होनी चाहिए।

6.2.3. ठुमरी :

ठुमरी इस गायन प्रकार का जन्म लखनऊ के नवाबों के दरबार में हुआ। लखनऊ के वाजिदअली शाह ठुमरी के रचयिता के रूप में जाने जाते हैं। इनके दरबार में ठुमरी की उत्पत्ति हुई ऐसा माना जाता है। लखनऊ और बनारस ये दो घराने ठुमरी के लिए काफी मशहूर है।'ठुमरी' का मुख्य रस श्रृंगार प्रधान होता है। काफी, खमाज, झिंझोटी, पिलू,, बरवा आदि रागों में ठुमरी विशेषता गायी जाती है। जिन रागों में टप्पा गाया जाता है, प्रायः उनमें ही ठुमरी गाई जाती हैं। ठुमरी गायन में शब्दों को हावभाव द्वारा बताकर गीत का अर्थ प्रकट करना यह इस गायन प्रकार की विशेषता होती है। ठुमरी गायन प्रकार उत्तर प्रदेश में अधिक गाया जाता है। उत्तर भारत में ठुमरी गायन को तवायफ जैसी संगीत पेशावर महिलाओं द्वारा गाया जाता था। निसंदेह 'ठुमरी' एक बहुत लोकप्रिय प्रकार है। महाराष्ट्र में ठुमरी गायन प्रकार बहुत कम ही गायक गाते हुए दिखाई देते हैं। 'ठुमरी' मुख्य रूप से दीपचंदी, पंजाबी, अद्धा (आधी धुमाली) केहरवा आदि तालों में गायी जाती है, जो कि त्रिताल का ही एक प्रकार है। विलंबित लय में ठुमरी के साथ तबला संगतकार ठेके को भरते हुए गायक द्वारा अंतरा गाये जाने पर ठुमरी के मुखडे के साथ कहरवा ताल की लग्गी बजाता है एवं उस लग्गी के विभिन्न प्रकारों को भी संगति में प्रयुक्त करता है, जिसे लडी कहते है, जो की एकल वादन में विस्तारक्षम रचना के रूप में परिचित हैं। ठुमरी के जैसे दादरा गायन के साथ दादरा ताल या कहरवा ताल का ठेका बजाते हुए तबला वादक संगति करता है तथा इसमें भी ठेके का भराव एवं लग्गी लडियों जैसी विस्तारक्षम रचनाओं का प्रयोग किया जाता हैं। लग्गी एवं लडी के प्रयोग में केवल इसकी लौट–पलट ही बजायी जाती हैं।

6.2.4 होरी :

अधिकतर धृपद गायक होरी गाते है। 'होरी' इस गायन प्रकार को जब धमार ताल में गाया जाता है तो उसे 'धमार' कहते है। इस गायन प्रकार में होली का वर्णन होता है। फाल्गुन के माह में कृष्ण–गोपी की लिलाओं का वर्णन होरी गीतों का मुख्य विषय होता हैं। इस गायन प्रकार की शैली एक कठिन गीत शैली को कहाँ जाता है। कुछ होरी गीत प्रकार को दीपचंदी ताल में भी गाते है। होरी एक

कठिन गीत शैली मानी जाती हैं। कुछ गायक दीपचंदी ताल में इसको गाते है तथा तानक्रिया का भी प्रयोग करते है। धमार ताल में गायी जानेवाली होरी को 'पक्की होरी' और दीपचंदी ताल में गायी जानेवाली होरी को 'कच्ची होरी' कहाँ जाता हैं। होरी इस गायन प्रकार को उत्तर भारतीय सुगम संगीत में 'रंगपंचमी' इस त्योहार में गाया जाता हैं। उदा. 'ऐसी नां मारो पिचकारी', 'हमरी उमरीया होरी खेलन की' आदि चैती, कजरी प्रकार के गीत साल के बारह माह परिवेश से सबंधित सुंदर कविताओं पर आधारित होते हैं। इन प्रकारों को 'बारमासी' भी कहाँ जाता हैं। इस गीत प्रकारों को दीपचंदी के ठेके में शुरू करके दादरा, केहरवा के ठेके में लग्गी नाडे के माध्यम से इसमें रोमांचकता निर्माण की जाती है।

6.2.5. टप्पा :

ख्याल गायन के पश्चात टप्पा गायनशैली का विकास हुआ। टप्पा शब्द का अर्थ है उछलकुद, फलांग या अंतर भी कहाँ जाता है। टप्पा काफी, झिंझोटी, खमाज, पीलू, बरवा, भैरव आदि रागों में गाया जाता हैं। इन रागों में ध्रुपद गायन की रचनाएँ बहुत असाधारण हैं। टप्पा गायन प्रकार को शौरी मियाँ ने प्रचलित किया ऐसा कहाँ जाता है। टप्पा गायन प्रकार में प्रयुक्त बोल मुख्य रूप से पंजाबी शब्दों से बने है, इसका मुलस्थान पंजाब होना चाहिए। यह गायन शैली धुपद और खयाल गायनशैली से बिल्कुल अलग है। कुछ विद्वानोंद्वारा कहाँ जाता है कि, प्राचीन 'बेसरा' गीत से इसका विकास हुआ है। ध्रुपद, खयाल और टप्पा में अलग–अलग घराने थे। इन तीनों गायन प्रकारों का रियाज अलग तरह से करना पडता था। धुपद जैसै खानदानी और गंभीर प्रकार की शैली टप्पा जैसी चंचल स्वभाव के गायन के साथ गाना कठिन होता हैं। टप्पा गायन प्रकार में मुर्की, गमक, मींड, घसीट आदि अलंकारों का प्रयोग होता हैं। टप्पा विशेषतौर पर पश्तो, पंजाबी, सवारी आदि तालों में गाया जाता हैं।

6.3. वाद्यवादन की संगत :

साथ संगत में दुसरा महत्वपूर्ण प्रकार है, वाद्य संगीत के साथ संगत करना। इन वाद्यों के अन्तर्गत सतार, सरोद, व्हायोलीन, बासरी, सारंगी, शहनाई, हार्मोनियम जैसे वाद्यों का समावेश होता हैं। इन साजपर वादन दो तरह से किया जाता है;

एक गायकी अंग से और दुसरा तत् अंग इन दो पद्धतियों द्वारा होता है। गज और फूँक की सहायता से बजनेवाले वाद्य जैसे व्हायोलिन, बासरी जैसी वाद्यों पर गायकी अंग द्वारा ख्याल बजाया जाता है, इसी प्रकार इन वाद्यों को तत् अंग से भी प्रस्तुत किया जाता है। तत् अंग से प्रस्तुत करनेवाली रचना को 'गत' कहते है। व्हायोलिन, बासुरी इन वाद्यों पर जब ख्याल प्रस्तुत होता है तो, उसकी संगत भी गायन की संगत की तरह ही की जाती हैं। इन वाद्यों के साथसंगत और गायन शैलियों की साथ संगति में इतना अन्तर अवश्य होता है की, जहाँ गायन के संगंति में तबला संगतकार को अपनी रचनाएँ बजाने और अपना वादन कौशल्य दिखाने की बहुत कम गुंजाईश या सम्भावनाएँ रहती हैं। वही तबला संगतकार को वाद्यसंगीत संगति में तबले की विभिन्न रचनाओं का वादन करने की स्वतंत्रता प्राप्त होती है, जिसमें वह विस्तारक्षम रचनाओं का भी प्रयोग प्रमुख तंतकार के वादन के अनुरूप कर सकता है। वादन की संगती का तात्पर्य स्वरप्रधान वाद्यो के साथ तबला वादन से हैं। स्वरप्रधान वाद्यों में दो प्रकार के वाद्य आते हैं। एक तो वे जिनमें मिजराब के प्रहार से ध्वनि उत्पन्न की जाती है और दुसरी वे जिनके ध्वनि गज के घर्षन से या फूँक से उत्पन्न होती हैं। व्हायोलिन, सांरगी इत्यादि गज से बजाएँ जाते है तथा शहनाई, बांसुरी इत्यादी फूँक से बजाएँ जाने वाले वाद्य हैं। इन वाद्यों में दीर्घ काल एक ही स्वर को लगा सकते हैं। इनका वादन गायकी अंग की शैली नुसार किया जाता है। सितार, सरोद, संतूर, गिटार, वीणा आदि वाद्यों में ध्वनि को आघात करके निर्माण किया जाता हैं। इसके साथ तबला संगत का प्रयोग लय–ताल दिखाने के हेतु से किया जाता हैं। आघात से बजाएँ जानेवाले वाद्यो पर अधिकांश गतें बजायी जाती हैं।

प्रहार से बजायी जानेवाली वाद्यों की वादनशैली में छंद और लयकारी का अधिक महत्व होने से उनकी संगति में तबला वादक को स्वतंत्र तबला वादन में प्रयोग किए जानेवाले उठान, पेशकार, कायदा, रेला, तिर्हाइ, मुखडा, गत, टुकडा आदि रचनाओं को किसी सीमातक प्रयोग करने का अवसर रहता है और वह तबले की इन संरचनाओं के आधार पर समुचित बोल के संयोजन द्वारा तबला संगत करता है। तंत्र वाद्यों में 'झाला' वादन के साथ तबला वादक को ठेके और रेले की तैयारी का प्रदर्शन करना होता हैं। घर्षण या फूँक से बजाएँ जानेवाले वाद्यों की

ध्वनि में स्थिरता अधिक होने से, इसमें कंठध्वनि से कुछ समानता रहती है। इसलिए इन वाद्यों में गायकी अंग की शैली का प्रयोग किया जाता हैं। इन वाद्यों के साथ गायन शौलियों की भाँति ही तबला संगति की जाती है।

वाद्य संगीत पर बजनेवाले विलंबित लय की गत को 'मसिदखानी गत' और द्रुत लय में बजायी जानेवाली गत को 'रजाखानी गत' कहते है। मसीदखानी गत प्रमुख तौरपर तीनताल, झपताल, रूपक, आडाचौताल तथा मत्त, रूद्र आदि तालों में भी बजायी जाती है। वाद्य संगीत में आलाप, जोड, मसिदखानी, रजाखानी, झाला आदि प्रकार से प्रस्तुतिकरण होता है। आलाप तथा जोड बजाने के बाद मसीदखानी गत के आरंभ में तबला संगतकार को दो–तीन आवर्तन में एकल वादन करने की छुट मिलती है। इस बीच तबला संगतकार पेशकार के कुछ पलटे बजाकर गत के अनुरूप तिहाई बजाकर सम पर आता है और फिर से ठेका शुरू होता हैं। वाद्यसंगीत को साथ संगत करते समय तबला संगतकार को बजाने की छुट यह गायन के साथ संगत करने से प्रायः अधिक मिलती है जिस कारण एक तबला संगतकार अपनी तैयारी, बुद्धिकौशल्य, लय–लयकारी का परिचय देता हैं। प्रमुख वाद्य वादक जब अपने वादन में विभिन्न लयकारी, छंद आदि का प्रयोग करता है उस समय तबला वादक को भी अपने वादन में कायदे, रेले, छंद, गत, तिहाई, टुकडा, मुखडा आदि रचनाओं का प्रयोग प्रमुख कलाकार के वादन के अनुरूप करना होता हैं। जब भी मुख्य कलाकार बजाने के लिए इशारा करता है, तब तबला संगतकार जो पूर्व लयकारी या छंद चल रहा होता है उसी का प्रदर्शन वो अपने वादन में करने का प्रयास करता है। इस प्रकार का वादन मुख्य कलाकार के वादन के अनुरूप होना आवश्यक होता है। वाद्य संगीत की खासीयत यह है कि, इसमें बजनेवाली तिहाई अलग–अलग मात्रा से बजकर सम पर आती हैं। मुख्य कलाकार ने अपने वादन में बजायी हुई तिहाई की सही नकल करके उसी प्रकार की तिहाई बजाने की क्षमता तबला संगतकार के पास होना आवश्यक होता है। तंतुवाद्य में 'झाला' वादन के साथ तबला वादक ठेके और रेले को तैयारी के साथ बजाता है।

शोधार्थी ने कई गायक, वादक तथा नृत्यकारों के साथ तबला संगत की है। उस अनुभव से शोधार्थी को वाद्यसंगीत के साथ संगत के बारे में लगता है कि, वाद्य संगीत के साथसंगत करना गायन की संगत से बिलकुल अलग होता हैं। तत् वाद्यों

के संगत में लयकारी को जादा महत्व दिया जाता हैं। लयदार स्वरआलाप, जोड, गत, झाला आदि रचनाएँ तबला संगतकार को लयकारी युक्त वादन करने के लिए प्रेरित करती हैं। तबला वादक संगत करते समय लय, गति, छंद इनके अनुसार ठेका बजाता है। जहा रिक्त स्थान है, वहाँपर आसदार और जोरदार बोलों का सहारा लेता हैं। गत का मुखडा कितने मात्रा का है और किस मात्रा से उठ रहा है इसे भलीभाँति समझकर गत के मुखडे की भाँति तबले का मुखडा बजाकर तबला संगतकार सम पर आता है। प्रमुख कलाकार जब तबला संगतकार को गत वादन के बाद बजाने का अवसर देता है, तब तबला संगतकार शुरूआती में पेशकार एवं कायदा, रेला जैसी विस्तारक्षम रचना को बजाने का प्रयास करता हैं। जोड या आलाप चल रहा हो तो उस लयकारी से तबला संगतकार संगत करने का प्रयास करता है। अगर तंतकार ने अपने गत में तिस्त्र जाति का या खंड जाति का प्रयोग किया हुआ है और तंतकार तबला संगतकार को बजाने के लिए इशारा करता है तो तबला संगतकार कायदा या रेले जैसी तिस्त्र जाति की रचना को भी प्रस्तुत कर सकता है, लेकिन वह वादन प्रमुख तंत्कार ने बजाएँ हुए वादन के अनुरूप होना आवश्यक होता हैं। तंत्कार ने उस गत में बजाएँ हुए तिहाई की नकल संगतकार को अपने बजाएँ हुए वादन में करनी पडती है। इस प्रकार विस्तारक्षम रचनाओं का वादन करते समय तबला संगतकार को उस विस्तारक्षम रचना को प्रस्तुत करने का स्वरूप एकल तबला वादन प्रस्तुतिकरण जैसा होना आवश्यक नही होता, क्योंकि तबला संगतकार को केवल चार या पाँच आवर्तनो में अपना अपेक्षित एवं तंत्कार के अनुरूप वादन करके उस गत के अनुरूप तिहाई बजाकर अपना वादन समाप्त कर मुल ठेके पर फिर से आना होता हैं।

शोधार्थी को कई संगीत मैफिलों को सुनने ओर देखने के पश्चात लगता है कि, वर्तमानकालीन वाद्यसंगीत वादकों के वादन में काफी नवीनता दिखाई देती हैं। आज के वाद्यसंगीत में क्लिष्ट लयकारीया, विभिन्न मात्राओं की तिहाईयों का भी समावेश तबला संगतकार अपने वादन में करता है। कुछ तंतकार वादक $5\frac{1}{2}$, $8\frac{1}{2}$ तथा $10\frac{1}{2}$ मात्राओं में भी गत को प्रस्तुत करते हैं। इसलिए तबला संगतकार के लिए यह महत्वपूर्ण है कि, साथ संगत करते समय सभी प्रकार की लय में बजाने

की तथा विभिन्न तालों के ठेके तथा उसमें वादन करने की क्षमता उसके पास होनी आवश्यक होती हैं। इस प्रकार कहाँ जा सकता है कि, तबला वाद्य ने साथसंगत के लिए गायन की तरह ही वाद्यसंगति के साथ भी अपना विशेष स्थान प्रस्थापित किया हुआ है।

6.4. नृत्य की संगत :

कथक नृत्य भारत के प्राचीनतम शास्त्रीय नृत्य प्रकारों में से एक नृत्य प्रकार है। उत्तर भारत में यह नृत्य प्रकार काफी लोकप्रिय है। "कथक का शाब्दिक अर्थ है 'कथा कहे सो कथक कहावे'। कथक नृत्य को नटवरी नृत्य भी कहते हैं। इसकी प्रस्तुती में भाव प्रदर्शन करके श्रृंगार रस का निर्माण करना इस नृत्य की प्रमुख विशेषता है।[5] कुछ विदवान कलाकारोंद्वारा कहाँ जाता है कि, कथक नृत्य की उत्पत्ति वाल्मिकी रामायन के दौरान हुई थी। वाल्मीकि ने कुशाल्वन को यह नृत्य सीखाया। बाद के समय में, केवल कुशाल के अनुयायियों ने उन्हें कुशाल कहना शुरू कर दिया। पंडित शंभु महाराजा के चाचा श्रीराम दत्ताजी के कारण बीसवी सदीं के चौथे दशक में इस नृत्य रूप को 'कथक' नाम मिला और आगे नटवरी नृत्य शैली का निर्माण हूआ। शुरूआती के समय में कथक नृत्य के साथ संगत के लिए पखावज का ही प्रयोग होता था, किन्तु धीरे–धीरे समय के साथ उसका स्थान तबला वाद्य ने ले लिया, क्योंकि तबला वाद्य ने नृत्य के सभी पक्ष को आत्मसात कर लिया था। नृत्यकार पैरो पर निकास द्वारा भिन्न–भिन्न लयकारियों को प्रदर्शित करता है। कथक नृत्य में नर्तक थाट, आमद, उठान, तोडे, परने, चक्रदार परने, बाँट, उपज आदि रचनाओं को प्रस्तुत करता हैं।

उत्तर भारत में तबला वादन का नृत्य से संबध काफी समय से चला आ रहा है। प्रत्येक नृत्य में लय ताल की प्रधानता तो रहती ही हैं। उत्तर भारत की नृत्यों में मणिपुर नृत्य के साथ पुंग या खोल, उडीसी नृत्य के साथ मृदंग और कथक नृत्य के साथ तबला या पखवाज द्वारा संगति करने की प्रथा रही है। कालांतर में कथक नृत्य के साथ तबला वादन की संगति अत्यंत लोकप्रिय होने से, वर्तमान समय में प्रायः उसके साथ तबला वादन ही होता है। उत्तर भारत के नृत्यों में कथक नृत्य विशेष रूप से लय–ताल प्रधान नृत्य हैं। आज कथक नृत्य में नाची जानेवाली कई

रचनाएँ तबला वादन प्रस्तुती में बजायी जाती हैं। कथक नृत्य के साथ तबला वादक बराबर की नृत्य के अनुरूप संगत करता हैं। वादक नृत्य के बोलों के अनुरूप हूबहू बोलों का वादन तबले पर करता हैं। नृत्य की संगति में तबला वादक विभिन्न तिहाईयों, बोल भराव द्वारा, मुखडों द्वारा आवश्यकता के अनुरूप प्रयोग करके प्रस्तुत ताल के ठेके को सौंदर्य से भर देता हैं। कथक नृत्य में गतभाव, ठुमरी, दादरा, होरी जैसे अभिनय की भी प्रस्तुती की जाती है। इसके साथ मुलायम तथा चंचल बोलों का प्रयोग करके लग्गी, लडी का प्रयोग करके तबला संगतकार इसे योग्य तरीके से सजाने का काम अपने वादन से करता है। नृत्य के साहित्य और तबला वादन के साहित्य में काफी समानता दिखाई देती है। कथक नृत्य के साथ संगत करना यह किसी गायन योग्य तरीके से सजाने का या वाद्य संगीत के साथ ऐन वक्त पर संगत करने से काफी कठिन होता हैं। नृत्य के साथ संगत करने से पहले अगर तबला संगतकार कथक नृत्यकार के साथ अपनी नृत्य के बारे में सही जान–पहचान कर चुका हो तो तबला वादक संगति करते समय आसानी से नृत्य की संगति कर सकता है। नृत्य में खुले बाज का प्रयोग किया जाता है जिसमें, गत, टुकडा, चक्रदार आदि का प्रयोग होता है। इनमें से टुकडा या चक्रदार जैसे प्रकारों कों यदि तबला संगतकार याद (मुखोद्‌गत) कर लेता है, तो संगति करते समय भलिभाँति, अच्छे निकास के साथ वह अपनी वादन की प्रस्तुति कर सकता है। कथक नृत्य में श्रृंगार, करूण, शांत, गंभीर आदि रस का निर्माण किया जाता हैं। तबला संगतकार को नृत्य में प्रस्तुत रस के अनुसार तबले की संगत करनी पडती है। कथक नृत्य के साथ, तबला संगतकार को एक निश्चित ज्ञान प्राप्त करने और कुछ शब्दों का अभ्यास करने की आवश्यकता होती हैं। "कथक नृत्य के ध्वनियों की एक अलग परिभाषा होती है और संगतकार को उस परिभाषा के बारे में पता होना चाहिए। नृत्य के साथ संगत करने के लिए तबला संगतकार को साथ संगत समर्थ गुरू से सीखनी चाहिए। नृत्य के साथ संगत करते समय कई बार तबला संगतकार को अपने हाथों और अँगुलियों की स्थिति को बदलकर वादन करना पडता हैं। अगर तबला संगतकार को बंद बाज की आदत हो तो नृत्य के साथ जिसमें खुले बोलों को प्रयोग होता हैं, उसके साथ संगत करने में काफी मेहनत करनी पड सकती हैं। चूँकि तबला संगतकार को नृत्य के साथ बराबर संगत

करनी पडती है। इसके साथ संगत करने में गायन या वादन के साथ केवल ठेका वादन करके संगत को निभाया नही जा सकता"।[6] शोधार्थी के मतानुसार, कथक नृत्य जैसे कठिन प्रकार जो काफी तैयारी के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं इसके लिए तबला संगतकार को अलग सोच तथा अलग रियाज की आवश्यकता पडती हैं। कथक नृत्य में सवाल– जवाब जैसे प्रकार के साथ संगत करते समय तबला संगतकार को अपना बुद्धिचातुर्य एवं हाथ की तैयारी दिखाना आवश्यक होता है।

तबला एवं कथक नृत्य तालप्रधान है इस वजह से इनका पारंपरिक अन्र्तसंबध स्पष्ट होता हैं। तबला एवं कथक नृत्य का एक दुसरे के विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। दोनों का जो वर्तमान स्वरूप हम देख रहे हैं उसके लिए कई संगीत तज्ञों ने अथक प्रयास करके इन दोनो विधाओं को अधिक समृद्ध किया हुआ हैं। तबले की विस्तारक्षम तथा पूर्वसंकल्पित रचनाओं के विकास के लिए कथक नृत्य की सफल संगति भी रही है। कथक नृत्यकारों ने भी नृत्य की रचना सामग्री को समृद्ध करने के लिए तबले कि विभिन्न रचनाओं से प्रेरणा लेकर कई नई रचनाओं का निर्माण किया और कुछ रचनाओं को मूल रूप में ग्रहण भी किया और इस परिणाम स्वरूप कथक नृत्य और तबला इन दोनो विधाओं का विकास होता गया और रचनाएँ अधिक समृद्ध होती गयी एवं काफी लोकप्रिय भी होती गयी। किसी भी तबला वादक को कथक नृत्य के साथ संगत करना एक चुनौतीपूर्ण होता है, क्योंकि कथक नृत्य के साथ संगत के लिए उसी के वर्ण, रचनाओं के अनुरूप वर्ण, रचनाओं आदि का निर्माण करना पडता है। तबला वादकों ने इस चुनौतियों का सामना किया और कथक नृत्य के साथ सफलतापूर्वक संगत की। तबला वाद्य की संगत नृत्य के साथ सही रूप में सफल साबित हुई इसमें पुरब बाज का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। कथक के साथ संगत करने में पुरब बाज के तबले के लखनऊ घराने को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। लखनऊ घराने के उपर कथक नृत्य शैली का प्रभाव होने की वजह से इस घराने को 'नचकरन बाज' के नाम से भी जाना जाता है। इसका मुख्य श्रेय उस्ताद आबिद हुसेन खाँ सहाब को जाता है। तबले में बनारस घराना है जो लखनऊ घराने की ही एक शाखा है। कथक नृत्य की संगति के लिए यह घराना भी काफी लोकप्रिय जाना जाता है।

"कथक नृत्य की रचनाओं की भाषा पारंपारीक तबले की भाषा नहीं होती। इसलिए उस भाषा के अक्षरों, शब्दों का तबलेपर निकास कैसे होता है, सो कथक नृत्यकार से अथवा कथक का तबला अच्छी तरह बजानेवाला कलाकार से जान लेना अत्यंत जरूरी होता है। इसलिए उन रचनाओं में आए हुए शब्द–समुहों को उन निकासों के अनुरूप रियाज करके हस्तसाध्य (आत्मसात) कर लेना चाहिए"।[7]"कथक में विभिन्न तालों की मात्रा, विभाग, ठेका आदि स्वरूप दिखाई देता है। जिस प्रकार तबला वादक पेशकार, कायदा, रेला आदि रचनाओं की सहायता से ताल का प्रस्तार करता है, ठिक उसी प्रकार कथक नर्तक अपने पैरो में बंधे घुंघरूओं के पदाघातों से विभिन्न प्रकार की लय जातियों का निर्माण करने का प्रयास करता हैं। तबले के कायदे, रेले के जैसे ही 'तत्कार' के पलटे तथा लय–बाँट जैसी रचनाएँ होती हैं। कथक नृत्य में तोडे तथा तत्कार के तीन वर्ण ता, थै, ई से मुख्यताः की गई हैं। आवश्यकता नुसार कुछ अन्य बोल जैसे तिगदा, दिग, थुन, त्राम आदि का भी प्रयोग सहायक वर्णों के रूप में किया जाता है"।[8] कथकनृत्य में गतनिकास में नर्तक पैरों से चाल दिखाता है, उस चाल के वजन का ठेका तबले पर तबला संगतकार बजाता है, जिसकी विशेषताः मध्यलय या द्रुतलय में प्रस्तुति होती है। नर्तक गतभाव का प्रदर्शन करता है तब तबला संगतकार पदसंचलन को देखते हुए आवश्यकता नुसार वादन करता है, अन्यथा सीधा ठेका ही बजाया जाता है। तत्कार जैसे द्रुतलय में प्रस्तुत किए जानेवाले प्रकार के साथ तबला संगतकार तिनताल के ठेके को द्रुतलय में बजाकर उसमें अन्य बोलों की सहायता से भरकर बजाता है। नर्तक द्वारा प्रस्तुत रचना के अक्षरसंख्या में दुगुनी या चौगुनी बोलों का उपयोग करके नृत्य के बोलों को भरता है। जैसे नृत्य के बोल "तकिट तकिट" हो तो तबला संगतकार "धाऽतिरकिटतकतिरकिट" या "तकतिरकिट तकतिरकिट" बोल बजायेगा। नृत्य के बोल "तकतकिट" हो तो तबला संगतकार "धाऽतिरकिटतक धाऽतिरकिटतकतिरकिट", नर्तक के बोल "तिगदादिगदिग थै" हो तो तबला संगतकार "तित् धाऽतिरकिट धाऽ" या "किडनगतिरकिटधाऽ" बोलों को बजा सकता है। इन बोलों का निकास प्रत्येक तबला संगतकार की सोच, हाथ की तैयारी, रचना में स्थित लय इस पर वह संगतकार अपने बोलों का चुनाव कथक नृत्य के साथ संगत करते समय करता है। कथक नर्तक जो बोल अपने पदन्यास से निकाल रहा है

उनके अनुरूप तबले से निकलने वाले बोल हो और ऐसा प्रतित हो की जैसे नृत्य के सभी बोल तबला संगतकार अपने वादन में निकाल रहा है।"संगतकार के पास अच्छी अच्छी रचनाओं का संग्रह हो; किन्तु वे रचनाएँ प्रायः ज्यो की–त्यों साथ–संगत में नही बजाई जा सकती। ऐसी हालत में उनमें उचित बदल करके, उनकी सुयोग्य पुनर्रचना करने अथवा उनमें अन्तर्भूत शब्दों का साथसंगत में उचित स्थानपर उपयोग करने का ज्ञान एवं कौशल्य संगतकार को अवगत कर लेना चाहीए। सर्वसाधारणता यह ज्ञान गुरू से प्राप्त होने की अपेक्षा न की जाए। इसके लिए अलग अलग समर्थ संगतकारों के द्वारा कथक नृत्यकारों के लिए की गई साथ संगत का निकट से अवलोकन करके तथा उनके विषय में सुक्ष्म अध्ययन, चिंतन एवं मनन किया जाए तो प्रभावी साथसंगत करने का मार्ग प्राप्त हो सकता है"।[9] इसी कारण तबला संगतकार को नर्तक के साथ पहले संगत किया हुआ होना चाहिए या उस कलाकार के नृत्य से भलिभाँति परिचीत होना चाहिए। तभी वह कथक नृत्य के साथ एक उत्तम संगत कर पाएगा ऐसा शोधार्थी का मानना है। आगे कथक में प्रस्तुत किए जानेवाले तत्कार प्रकार एवं उसके के साथ तबला संगतकार द्वारा तबलेपर निकलनेवाले बोलों को दर्शाने का शोधार्थी ने एक प्रयास किया है। तत्कार का उदाहरण निम्नानुसार :

तत्कार नं. 1 : ताल : तिनताल

नर्तक :

x	"ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत् ।
2	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽऽ	ऽऽऽऽ ।
0	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत् ।
3	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽऽ	ऽऽऽऽ"।[10]

तबला संगतकार :

x	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक ।
2	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	तेत्ऽऽऽ	ऽऽऽऽ ।
0	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक ।
3	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	तेत्ऽऽऽ	ऽऽऽऽ ।

पलटा नं. 2 **नर्तक :**

x	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	।
2	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽऽ	तत्ऽऽऽ	।
0	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	।
3	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽऽ	तत्ऽऽऽ	।

तबला संगतकार :

x	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	।
2	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धेत्ऽऽऽ	धेत्ऽऽऽ	।
0	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	।
3	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धेत्ऽऽऽ	धेत्ऽऽऽ	।

पलटा नं. 3 **नर्तक :**

x	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	।
2	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्तत्त	तत्तत्त	।
0	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	।
3	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्तत्त	तत्तत्त	।

तबला संगतकार :

x	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	।
2	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धेत्धेत्	धेत्धेत्	।
0	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	।
3	धाऽतिरकिटतक	ताऽतिरकिटतक	धेत्धेत्	धेत्धेत्	।

पलटा नं. 4 **नर्तक :**

x	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽ	तत्ऽऽ	।
2	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	तत्ऽऽ	तत्ऽऽ	।
0	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	ताथैथैतत्	आथैथैतत्	।
3	ताथैथैतत्	आथैथैतत	तत्तत्त	तत्तत्त	।

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धेत्ऽऽऽ धेत्ऽऽऽ ।

2 धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धेत्ऽऽऽ धेत्ऽऽऽ ।

0 धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक ।

3 धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धेत्धेत् धेत्धेत् ।

तिहाई : **नर्तक :**

x ताथैथैतत् आथैथैतत् थैऽऽ ताथैथैतत् ।

2 आथैथैतत् थैऽथैऽ ताथैथैतत् आथैथैतत ।

0 थैऽऽ थैऽऽ थैऽऽ ताथैथैतत् ।

3 आथैथैतत् थैऽऽ ताथैथैतत् आथैथैतत् ।

x थैऽथैऽ ताथैथैतत् आथैथैतत थैऽऽ ।

2 थैऽऽ थैऽऽ ताथैथैतत् आथैथैतत् ।

0 थैऽऽ ताथैथैतत् आथैथैतत् थैऽथैऽ ।

3 ताथैथैतत् आथैथैतत थैऽऽ थैऽऽ । थै

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ।

2 ताऽतिरकिटतक धाऽधाऽ धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक ।

0 धाऽऽऽ धाऽऽऽ धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ।

3 ताऽतिरकिटतक धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक ।

x धाऽधाऽ धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धाऽऽऽ ।

2 धाऽऽऽ धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक ।

0 धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धाऽधाऽ ।

3 धाऽतिरकिटतक ताऽतिरकिटतक धाऽऽऽ धाऽऽत्त । धा

आगे कथकनृत्य और तबला संगतकार द्वारा प्रस्तुत किए जानेवाले विस्तारक्षम रचनाओं के विस्तार को दर्शाने का शोधार्थी ने एक अभ्यासपूर्वक प्रयास किया हुआ है।

6.4.1. पेशकार :

पेशकार तबला वादन की अत्यंत महत्वपूर्ण विस्तारक्षम रचना हैं। कायदा व रेला इन विस्तारक्षम रचनाओं की अपेक्षा पेशकार में तबला वादक को अधिक स्वतंत्रता प्राप्त होती हैं। पेशकार के मूल स्वरूप का विस्तार करते समय वादक को उसमें परिवर्तन करने की स्वतंत्रता होती हैं। जिस प्रकार तबला वादक पेशकार को तबले पर बजाते है। उसी प्रकार से कथक नृत्य में भी इसका नर्तक की रूची नुसार प्रयोग किया जाता हैं। पेशकार के विस्तार में वादक वर्ण–समुहो में परिवर्तन करता है, विभिन्न तिहाईयों का प्रयोग, कभी–कभी मात्रा की शुरूवात से तो कभी मात्रा के आधे समय से वर्णों को आरंभ में पेशकार की प्रस्तुति की जाती है। पेशकार के भाँति कथक में नर्तक पदाघातों का भी विस्तार करते हैं जिसमें पेशकार की विशेषताओं का समावेश होता हैं। नर्तककार अपने पदाघांतों में परिवर्तन करके विभिन्न लय और वजन, विभिन्न तिहाईयों द्वारा प्रस्तुति करता हैं। कथक नृत्य में पेशकार की संगति के बारे में नागेश्वर लाल कर्ण अपनी "कथक नृत्य के साथ तबला संगति" इस ग्रंथ में लिखते है कि, "बहुतसे कथक नर्तक पेशकार के साथ कथक पदाघांतो का भी विस्तार करते है एवं बीच बीच में साँस लेकर फिर पदाघांतो का इस प्रकार प्रदर्शन करते है कि आम श्रोता यह समझ लेता है कि नृत्य समाप्त हो चुका है, पर वह वास्तव में समाप्त नहीं हुआ होता तथा क्षणिक अन्तराल के बाद विभिन्न प्रकारके पल्टे बनाये जाते है। इस प्रकार पेशकार कथक नृत्य के प्रयोग में भी अपना विशिष्ट स्थान रखता है।[11] एकल तबला वादन में बजायी जानेवाली पूर्वसंकल्पित रचनाओं के साथही विस्तारक्षम रचनाओं की प्रस्तुति भी कथक नृत्य में नर्तक करता हैं। पेशकार, कायदा, रेला, गत, टुकडा, मुखडा, चक्रदार, परण आदि रचनाएँ जो एकल तबला वादन में तबला वादक प्रस्तुत करता है ये रचनाएँ कथक नृत्य में भी प्रस्तुत होती है, लेकिन इसका स्वरूप कथक नृत्य में अलग होता हैं। कथक में पदंन्यास के साथ हावभाव, हस्तक इनको भी महत्व

दिया गया है। पेशकार, कायदा, तत्कार जैसी रचनाएँ प्रस्तुति में खाली का प्रयोग नही किया जाता है तथा इनका विस्तार भी पदन्यास के अनुरूप कुछ पलटों तक ही किया जाता है। पेशकार का एक उदाहरण निम्नानुसार :

x धिंऽक्ड धिंऽधाऽ ऽधाऽऽ धिंऽधाऽ। 2 धाति धाति धाधा धिंधा।

0 तकधिड़ा ऽनधा धिंधा धाति । 3 धाकिट तकधिं धाधा तिंना ।

x तिंऽक्ड तिंऽताऽ ऽताऽऽ तिंऽताऽ। 2 ताति ताति ताता तिंता ।

0 तकधिड़ा ऽनधा धिंधा धाति । 3 धाकिट तकधिं धाधा धिंना ।

6.4.2. कायदा :

'कायदा' तबला वादन की एक महत्वपूर्ण विस्तारक्षम रचना हैं। कायदे में मुल वर्णसमुहों का प्रयोग विस्तार करते समय पूरी कठोरता से किया जाता हैं। कायदे के विस्तार को पलटा कहते हैं। कायदे के विस्तार में कायदे के वर्णो और वर्णसमूहों को उलट पलटकर पेश करना याने 'पलटा' कहते हैं। जिस प्रकार से तबला वादन में कायदे का विस्तार में उसके पलटे, तिहाई आदि का प्रयोग किया जाता है, ठिक उसी प्रकार कथक नृत्य में भी कायदे की रचनाओं की आधार पर तत्कार का निर्माण किया जाता है एवं स्वतंत्र रूप से भी तत्कार का विस्तार होता है। कायदे के पलटे के समान ही कथक नृत्य में तत्कार के पलटे किए जाते है। बहुत से तबला वादक एवं कथक नर्तक आपसी समन्वय द्वारा कथक प्रस्तुति में विभिन्न प्रकार के कायदों का प्रदर्शन करते हैं। साथ ही पल्टो के कठिन से कठिन विस्तार इस प्रकार से करते हैं की श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाता है। नर्तक जब तत्कार में विस्तार करता है तो तबला वादक तत्कार के अनुरूप कायदे की प्रस्तुति करता है तथा उसका विस्तार करते संगति करता है। तबला वादक कथक नृत्य की संगति में कायदा बजाते समय नर्तक की रूची के अनुसार बजाता हैं। कायदो में लयकारी का काम अधिक होता है। इस प्रकार कायदे के नृत्य में हुए प्रदर्शन से वादक की कल्पना शक्ति का विस्तार तथा नृत्य प्रदर्शन में रंजकता का निर्माण होता है। कथक नृत्य में भी कायदे जैसी विस्तारक्षम रचनाका प्रयोग किया जाता है, अपितु उसमें खाली का प्रयोग नहीं किया जाता। इसका एक उदाहरण निम्नानुसारः

1. x धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना। 2 तातिटता तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

0 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना। 3 तातिटता तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

2. x धातिटधा तिटधाधा धातिटधा तिटधाधा। 2 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना।

0 तातिटता तिटताता तातिटता तिटताता। 3 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

3. x धातिटधा तिटधाधा ऽऽधाधा ऽऽधाधा । 2 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना।

0 तातिटता तिटताता ऽऽताता ऽऽताता । 3 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

4. x धातिटधा तिटधाधा धाऽधाधा धाऽधाधा । 2 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना।

0 तातिटता तिटताता ताऽताता ताऽताता । 3 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

5. x धातिटधा तिटधाधा धाधाऽऽ धाधाधाधा। 2 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिंनाकिना।

0 तातिटता तिटताता ताताऽऽ तातातात। 3 धातिटधा तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना।

तिहाई –

x धातिटधा तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना। 2 धाऽधाधा तिटधागे धिंनागिना धाऽधाधा ।

0 तिटधागे धिंनागिना धाऽऽऽ धातिटधा । 3 तिटधाधा तिटधागे धिंनागिना धाऽधाधा ।

x तिटधागे धिंनागिना धाऽधाधा तिटधागे । 2 धिंनागिना धाऽऽऽ धातिटधा तिटधाधा ।

0 तिटधागे धिंनागिना धाऽधाधा तिटधागे । 3 धिंनागिना धाऽधाधा तिटधागे धिंनागिना। धा

6.4.3. रेलाः

रेला तबले की एक महत्वपूर्ण रचना है जिसे द्रुतलय में प्रस्तुत किया जाता हैं। रेला पेशकार एव कायदे की तरह ही एक विस्तारक्षम रचना है, जिसका प्रयोग कथक नृत्य में भी किया जाता है। रेले में ऐसे ही वर्ण समुहों का प्रयोजन किया जाता है जिसे द्रुत लय में बजाया जा सके और वह रचना कथक नृत्य की रचना के समान हो। स्वतंत्र तबला वादन में बजायी जानेवाली सभी वादन सामग्रीयाँ कथक नृत्य को समृद्ध करती है जिनके अन्तर्गत रेला इस विस्तारक्षम रचना का समावेश होता है। रेले को कथक नृत्य के साथ संगति में तबला संगतकार खूब तैयारी के साथ बजाता हैं। कथक नृत्य की संगति में रेले का विस्तार तबला संगतकार के सुझ बूझ पर निर्भर होता है। स्वतंत्र तबला वादन में विशिष्ट चलन का प्रयोग करके उस चलन कि अक्षर संख्या से दुगुनी या चौगुनी संख्या में अक्षरों

का प्रयोजन करके तबला वादक रेले की प्रस्तुति करता है। रेले का उदाहरण निम्नानुसार :

पलटा नं. 1

नर्तक : 6+6+4+6+6+4

x तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन । 2 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन ।

0 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन । 3 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन ।

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक।

2 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक।

0 ताऽतिरकिटतक तिरकिटताऽतिर किटतकतिरकिट ताऽतिरकिटतक।

3 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक।

पलटा नं. 2

नर्तक : 6+6+4+6+4+6

x तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन । 2तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट ।

0 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन । 3तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट ।

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक ।

2 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

0 ताऽतिरकिटतक तिरकिटताऽतिर किटतकतिरकिट ताऽतिरकिटतक ।

3 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट।

पलटा नं. 3

नर्तक : 6+4+6+6+6+4

x तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट । 2 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन ।

0 तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट । 3 तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन ।

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

2 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक ।

0 ताऽतिरकिटतक तिरकिटताऽतिर किटतकताऽतिर किटतकतिरकिट ।

3 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

पलटा नं. 4

नर्तक : 6+4+6+6+4+6

x तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट । 2 तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट ।

0 तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट । 3 तकिटत किटतक धिनतकि टतकिट ।

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

2 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

0 ताऽतिरकिटतक तिरकिटताऽतिर किटतकताऽतिर किटतकतिरकिट ।

3 धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकधाऽतिर किटतकतिरकिट ।

तिहाई –

नर्तक :

x तकिटत किटतकि टतकिट तकधिन । 2 धाऽतकि टतकिट तकधिन धाऽतकि ।

2 टतकिट तकधिन धाऽऽऽ तकिटत । 3 किटतकि टतकिट तकधिन धाऽतकि ।

0 टतकिट तकधिन धाऽतकि टतकिट । 2 तकधिन धाऽऽऽ तकिटत किटतकि ।

3 टतकिट तकधिन धाऽतकि टतकिट । 3 तकधिन धाऽतकि टतकिट तकधिन । धा

तबला संगतकार :

x धाऽतिरकिटतक तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक ।

2 धाऽधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक धाऽधाऽतिर ।

0 किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक धाऽऽऽ धाऽतिरकिटतक ।

3 तिरकिटधाऽतिर किटतकतिरकिट धाऽतिरकिटतक धाऽधाऽतिर ।

x	किटतकतिरकिट	धाऽतिरकिटतक	धाऽधाऽतिर	किटतकतिरकिट ।
2	धाऽतिरकिटतक	धाऽऽऽ	धाऽतिरकिटतक	तिरकिटधाऽतिर ।
0	किटतकतिरकिट	धाऽतिरकिटतक	धाऽधाऽतिर	किटतकतिरकिट ।
3	धाऽतिरकिटतक	धाऽधाऽतिर	किटतकतिरकिट	धाऽतिरकिटतक । धा

6.5. आदर्श साथ संगत :

गायक, वादक या नर्तक के साथ संगत में तबला संगतकार की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। आदर्श तबला संगत तभी कहलायी जा सकती हैं, जब तबला संगतकार मुख्य कलाकार यानी गायक, वादक या नर्तक की कला प्रस्तुति को सफल बनाने के हेतु से उसकी अपेक्षित संगत हो सके। "सोलो वादन की विविध रचनाओं का ज्यों–का–त्यों उपयोग साथसंगत में करना उचित नहीं है। इसीलिए रचना प्रकारों की वादन क्रिया में कल्पकता से उचित परिवर्तन करके उन्हें साथ–संगत के योग्य बनाने की जरूरत होती है" ।[12] साथसंगत में गायन, वादन और नृत्य के साथ तबला वाद्य की सबसे बुनियादी और महत्वपूर्ण भूमिका 'तालक्रिया' दिखाना होती है। तबला वादक साथसंगत करते समय तालक्रियाद्वारा गायक, वादक और नर्तक को अपने प्रदर्शन के दौरान जागरूक रखने का कार्य करता है। कोई भी गायक, वादक अथवा नर्तक अपनी कलाप्रस्तुति विशिष्ट लय अथवा ताल में उसका प्रदर्शन करता है। वह कलाकार अपनी कला के प्रस्तुति में एकरूप होकर गाता है। आलाप, तानों की उपज प्रस्तुत कर रहा होता है, तो तबला संगतकार को केवल ठेका देकर मुख्य कलाकार को उसे अपनी प्रस्तुति का अवसर देना चाहिए और जब मुख्य कलाकार तबला संगतकार को बजाने के लिए इशारा करता है तब संगतकार अपनी प्रस्तुति मुख्य कलाकार के प्रस्तुति के अनुसार वादन करने का प्रयास करता है। पुनः जब वो सम पर आता है तब वास्तव में वह प्रशंसनीय होता हैं। ठुमरी, गजल या भजन आदि की प्रस्तुति के साथ तबला संगतकार सुंदर सुंदर मुखडे बजाता है और लग्गी, रेला एवं बाँट जैसी रचनाओं को बजाकर एवं उन्हीं बोलों की तिहाई करके समपर आता है। वास्तव में तबला संगतकार भी गायक या वादक के

साथ अपने तबले से गाता है तो उसे एक आदर्श संगत कही जा सकती है ऐसा शोधार्थी का मानना है।

स्वतंत्र तबला वादन और साथसंगत में बडा अंतर है। सुगम संगीत की साथ करने वाले तबला वादक को किसी तंतूवाद्य की साथ करना बहुत कठिन हो सकता है। लेकिन स्वतंत्र वादन की शिक्षा प्राप्त एक तबला वादक को गहन अध्ययन और पूर्वाभ्यास से सुगम संगीत की साथसंगत करना कठिन नही होगा। संगत करनेवाला वादक एक उत्तम श्रोता होना चाहिए। साथ संगत करने के लिए वादक के पास उसकी कल्पना, प्रतिभा और निरिक्षण शक्ति काफी तेज होनी चाहिए। आदर्श संगत वही होती है, जो प्रमुख कलाकार के कला को सही तरह योगदान दे और उसकी प्रस्तुति सफलतापूर्वक यशस्वी बनाए। एक तबला वादक को हमेशा एक उच्च गुणवत्ता वाले तबला वादक है, यह साथ संगत करते समय भूल जाना चाहिए। संक्षेप में, उसे अपनी कला का अहंकार नहीं होना चाहिए ऐसा शोधार्थी का निवेदन है। शास्त्रीय गायन की संगत उस गायन पर निर्भर होती है। स्वरप्रधान गायकी के साथ तालरचना के विभाग तथा कमजादा आघातोंद्वारा खाली और भरी को महत्व देते हुए वजनदार ठेका बजाया जाता हैं। विलंबित लय में दायाँ–बायाँ के घुमारे की सहायतासे तथा तबले पर 'त्रक', 'तिरकिट,' 'धागेत्रक' आदि बोलों की मदत से ठेका वादन किया जाता है। आवर्तन समाप्ती के समय अंत के एक या दो मात्रा में तिहाई या मुखडा बजाकर तबला वादक सम पर आता है। गायन सीधी लय में चल रहा है तो शुद्ध ठेका और गायन में आड लयकारी का प्रयोग हो रहा हो तो आड लय में ठेके को बजाया जाता है। लयप्रधान गायन की संगत में जिस समय गायक लयकारी का प्रयोग करता है उस समय लय के साथ तबला संगतकार भी उसी लयकारी द्वारा ठेके में बदलाव करके उस गायन के अनुकुल संगत करता है ऐसा शोधार्थी का अनुभव भी है ।

सतार या सरोद इन तंतूवाद्य के साथ संगत करना गायन के साथ संगत करनेसे बिलकुल अलग होती है। तंतूवाद्य वादन में वादन का तंत्र अलग होता है। इसमें वादक ने बजायी हुई लयकारी को महत्व दिया जाता है। आरंभ में लयबद्ध स्वर, इसके बाद जोडकाम, गत, झाला आदि तबला संगतकार को तबला वादन करने के लिए बढावा देते है। "वाद्यसंगीत के साथ तबला संगतकार को बजाने की

छूट प्राप्त होती है। तबला वादक को इस प्रकार की साथसंगत करते समय यह बात याद रखनी पडती है की, तंतूवाद्य बजानेवाला कलाकार अपने साजपर कोई नगमा नही पेश कर रहा है। वह अपने साज पर स्वतंत्र प्रस्तुति कर रहा है और तबला वादक उसका हाथ बढाने में उसकी मदद कर रहा है यह बात ध्यान में रखनी पडती है" ।[13] तंतूवादक जब गत बजाने के लिए शुरू करता है तब तबला संगतकार को एक या दो आवर्तन में 'उठान' बजाकर फिर से ठेका बजाना पडता है। कईबार मुख्य वादक ने गत में जो लयकारी का प्रयोग किया है उस प्रस्तुति के अनुरूप तबला संगतकारद्वारा एकल वादन किया जाता है। इसमें कंइबार तबला वादक विस्तारक्षम रचनोंओं का भी प्रयोग करता है। जैसे कोई कायदा या रेला, लेकिन इसका विस्तार एकल वादन में होनेवाले विस्तार की तरह मनचाहे पलटे बजाकर नही किया जाता। प्रमुख कलाकार ने अपने वाद्य पर बजायी हुई गत के अनुरूप ही उस कायदा या रेला का विस्तार किया जाता है एवं उस रचना का वह स्वरूप होता है। शोधार्थी के मार्गदर्शक डॉ. अजय अष्टपूत्रेजी आदर्श साथसंगत के बारे में कहते है कि "तबलिया आधा गवैया होना चाहिए। गायन कि उत्तम साथसंगति के लिए वादक पर सुरों का अच्छा संस्कार होना चाहिए, वरना वह संगति केवल अर्थहीन साबित होगी। तबलावादक ने संगति हेतु केवल अपने गुरूपर निर्भर न रहते हुए साथसंगत सुनना भी आवश्यक है तथा तद्नुसार संगति की कोशीश करनी चाहीए और यह महत्वपूर्ण बात यह है कि, संगतकार को हमेशा ऐसी भावना रखनी चाहिए कि मेरे वादन के माध्यम से मैं प्रमुख कलाकार को एक तरह की मद्द कर रहा हूँ, इसमें किसी भी तरह का उँच निचपर नहीं रहना चाहीए। तबला संगतकार को हमेशा यह बात ध्यान में रखनी चाहिए की भले ही में कितनाही गुणवान विदवान क्यों न हूँ, लेकिन उस वक्त याने संगति के समय मैं प्रमुख कलाकार का केवल एक साथीदार ही हूँ। मेरे विचार से, तबला संगतकार के कान तथा उसकी नजर हमेशा सतर्क होनी चाहिए जिससे प्रमुख कलाकार से मिला हुआ एक इशारा ही, संगतकार के लिए काफी होता है, उसके पोषक वादन के लिए मेरे खयाल से यही एक आदर्श साथसंगत होगी" ।[14]

शोधार्थी के मतानुसार, कथकनृत्य में तबला संगतकार को सोलो वादन का भी उचित ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक होता है। तबला संगतकार को नृत्य के सभी

प्रकारों की समझ होना आवश्यक होता है। नर्तक के साथ संगत करते समय तबला संगतकार के पास सोचने के लिए जादा समय नही होता। गायन, वादन के साथ संगत में तबला संगतकार केवल अपने दिमाग से सोचता है। लेकिन कथक नृत्य के साथ संगत करते समय तबला वादक को दिल, दिमाग, कान, अपनी आँखे इन सभी इंद्रियोंका का ध्यान केवल नर्तक पर केंद्रित करना आवश्यक होता है। नर्तक के पदन्यास, हावभाव, हस्तक इनपर दृष्टि जमायें रखना आवश्यक होता है और उसके अनुरूप तबले के बोलों को निकाला जाता है। नृत्य के बोल और तबले के बोल एकजैसे भासमान हो तभी एक अच्छी संगत कथक नृत्य के साथ कहलाई जा सकती है।

अतः अनके विद्वान तबला वादक, गायक, वाद्यवादक, नर्तक इनसे साथसंगत के बारे में चर्चा करके तथा उनसे साक्षात्कार करने के पश्चात शोधार्थी को गायन, वाद्यसंगीत और नृत्य के साथ साथसंगत के बारे में यह दृष्टिगोचर होता है कि, गायन वादन कि साथ संगत से कथक नृत्य की संगत बिलकुल अलग होती है, क्योंकि शास्त्रीय गायन में तबला वादक को स्वतंत्र वादन करने की आवश्यकता नही होती, केवल ठेका वादन भी उसमें पर्याप्त होता है। गायन के साथ संगत करने वाला तबला वादक एक उत्तम सोलो वादक हो यह आवश्यक नही होता। उपशास्त्रीय संगीत या सुगम संगीत में केवल लग्गी या लडी जैसी विस्तारक्षम रचनाओं का प्रयोग तबला संगतकार करता है, लेकिन उसका लग्गी, लडी का विस्तार केवल लौटपलट करने तक ही सिमीत होता है। वाद्यसंगीत को साथ संगत करनेवाले तबला संगतकार के पास स्वतंत्र वादन करने की महारथ होनी आवश्यक होती है, विलंबित लय से लेकर अणु द्रुत लय तक बजाने के लिए लय का उत्तम ज्ञान उसके पास होना चाहिए। वाद्यसंगीत के साथ संगत करते समय तबला संगतकार के पास प्रमुख वाद्यसंगीत कलाकार को सुनने का, सोचने का समय होता है और जब तंतकार तबला वादक को बजाने की छुट देता है तब तबला संगतकार प्रस्तुत कलाकार के अनुरूप संगत कर सकता है। अपने वादन में विस्तारक्षम रचना पेशकार, कायदा, रेला, लग्गी, लडी या अविस्तारक्षम रचना उठान, मुखडा, मोहरा, तिहाई आदि रचनाओं के माध्यम से तंत्कार के अनुरूप उचित संगत कर सकता है। नृत्य की संगति करते समय नृत्य में आमद एवं तत्कार जैसी रचनाओं को

प्रस्तुत किया जाता है, ठिक उसी प्रकार से तबला वादक इन तीनो रचनाओं में नृत्य के बोलों को तबले पर वैसे ही बजाकर संगति करता हैं। अतः ऐसी संगति करते समय तबला वादक को सर्वप्रथम उसे भलिभाँति जानना जरूरी होता है, तभी उन थाटों को वह प्रस्तुत कर सकता है, अन्यथा इस प्रकार न करने से तबला वादक इन छोटी छोटी रचनाओं के साथ भी संगति करने में असफल हो सकता है।

शोधार्थी का अपना यह मत है कि, जबतक तबला वादक को जयपूर बनारस या लखनऊ किसी भी घराने के नृत्यकार के साथ यदि कुशल संगति का मानसन्मान प्राप्त करना है, तो उसे इन तिनों घरानों के बारे में अर्थात उनके विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त करना जरूरी होता है, अपितु जो वादक कलाकार इसे जान लेता है वही इन तीनों घरानों के नृत्यकारों के साथ संगति कर सकता है। शोधार्थी का यह भी मत है कि, जिस तबला वादक का हाथ तैयार है, जिसे लय का ज्ञान है, कुशाग्रबुद्धी है वही कलाकार नृत्य की संगति कर सकता है। यदि इसप्रकार न करने से नृत्यकार और स्वयं तबला वादक को भी संगति करते समय कठिर्नाइयाँ उत्पन्न हो सकती है। यदि इस प्रकार की संगति लोगों के सामने प्रस्तुत कि जाए तो सफल संगति कलाकार का मान सन्मान वह कतई प्राप्त नही कर सकता। तबला वादक को एक उत्तम संगतकार होने के लिए एक अच्छा कलापारखी और अच्छा रसिक होना चाहीए, तभी वह गायन, वादन एवं नृत्य इन विधाओं के साथ अच्छी संगत कर सकता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि, तबला वादक को गायन, वादन एवं नृत्य के साथ एक अच्छी संगत सीखने के लिए कई विद्वान तबला वादकों की साथसंगत सुनना यह एक उत्तम पर्याय इसके लिए माना जा सकता है। किसी भी प्रकार की साथसंगत को केवल किताबों में पढकर नही सिखा जा सकता उसके लिए लगातार संगत करना सबसे अच्छा समाधान हैं। गुरु के मार्गदर्शन में ज्ञानी और बुद्धीमानी कलाकारों के साथ संगत करके तबला संगतकार इसका अभ्यास जरूर कर सकता है, ऐसा शोधार्थी का मानना है।

6.6. पादटिप्पनीयाँ :

1. दंडगे, आमोद, "सर्वांगीण तबला" (मराठी), भैरव प्रकाशन, कोल्हापुर, चौथा संस्करण, 2017 पृ. 112
2. सरल, भीमसेन, "तबला संगतकार एवं कलाकार", कनिष्क पुब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली, आवृत्ती 2014, पृ. 49
3. सरल, भीमसेन, "तबला संगतकार एवं कलाकार", कनिष्क पुब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली, आवृत्ती 2014, पृ. 36
4. पं. तळवलकर, सुरेश, "आवर्तनः भारतीय संगीतातील, स्थूलता आणि सूक्ष्मता" (मराठी), राजहंस प्रकाशन, पुणे, प्रथम संस्करण, 2014. पृ. 105
5. साक्षात्कार : रावळ, नुपुर, कोल्हापूर,दिं. 26.01.2021
6. साक्षात्कार : डॉ.अष्टपूत्रे,अजय दिं. 20.04.2021
7. पं. माईणकर,सुधीर, "तबलावादन कला और शास्त्र", (हिंदी) गांधर्व महाविद्यालय, मिरज, प्रथम संस्करण, 2000.पृ. 153
8. साक्षात्कार : रावळ, नुपुर कोल्हापूर,दिं. 26.01.2021
9. पं. माईणकर, सुधीर, "तबलावादन कला और शास्त्र", (हिंदी) गांधर्व महाविद्यालय, मिरज, प्रथम संस्करण, 2000. पृ. 154
10. साक्षात्कार : रावळ, नुपुर, कोल्हापूर, दिं. 26.01.2021
11. कर्ण, नागेश्वर लाल, "कथक नृत्य के साथ तबला संगति", कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. 148
12. पं. माईणकर, सुधीर, "तबलावादन कला और शास्त्र", (हिंदी) गांधर्व महाविद्यालय, मिरज, प्रथम संस्करण, 2000. पृ. 149
13. साक्षात्कार : डॉ. अष्टपूत्रे, अजय, दिं. 20.04.2021
14. साक्षात्कार : डॉ. अष्टपूत्रे, अजय, दिं. 20.04.2021